लोक प्रशासनों में लोक/सिविल सेवा मूल्य तथा नीतिशास्त्र: स्थिति तथा समस्याएँ; सरकारी तथा निजी संस्थानों में नैतिक चिंताएँ तथा दुविधाएँ; नैतिक मार्गदर्शन के स्रोतों के रूप में विधि, नियम, विनियम तथा अंतर्रात्मा, उत्तरदायित्व तथा नैतिक शासन; शासन व्यवस्था में नीतिपरक तथा नैतिक मूल्यों का सुदृढ़ीकरण; अंतर्राष्ट्रीय संबंधों तथा निधि व्यवस्था (फंडिंग) में नैतिक मुद्दे; कारपोरेट शासन व्यवस्था।

Public/Civil service values and Ethics in Public administration: Status and problems; ethical concerns and dilemmas in government and private institutions; laws, rules, regulations and conscience as sources of ethical guidance; accountability and ethical governance; strengthening of ethical and moral values in governance; ethical issues in international relations and funding; corporate governance.

नैतिक मार्गदर्शन के स्रोतों के रूप में विधि, नियम, विनियम तथा अंतर्रात्मा
(Laws, Rules, Regulations and Conscience as Sources of Ethical Guidance)

लोक प्रशासन में लोक पदाधिकारियों के निर्णयों एवं कार्यों के मूल्यांकन (उचित/अनुचित के रूप में निर्धारण), उचित कर्मों के प्रोत्साहन एवं अनुचित कर्मों के हतोत्साहन तथा नैतिक चिंताओं एवं दुविधाओं से उबरने एवं उनके समाधान हेतु नैतिक मार्गदर्शन का होना आवश्यक है। नैतिक मार्गदर्शन के स्रोतों को व्यापक रूप से दो भागों में बांट कर देखा जा सकता है।

1. वाह्य स्रोत:- विधि, नियम, विनियम आदि।
2. आंतरिक स्रोत:- अंतर्रात्मा

मानव सभ्यता के विकास के साथ ही समाज एवं राजव्यवस्था के नियामन एवं निर्देशन हेतु विधियां एवं आचार संहिताएं तैयार की जाने लगी। उदाहरण के लिए मानव सभ्यता के इतिहास में मेसोपोटामिया के शासक हम्मूराबी (Hammurabi) प्रथम शासक है जिसने नियमों की एक संहिता तैयार करवाकर लागू किया जिसे 'हम्मूराबी की संहिता' के नाम से जाना जाता है जिसमें नैतिक मार्गदर्शन के विधियों का उल्लेख है, साथ ही उनके उल्लंघन की दशा में दंड के प्रावधान भी दिए गए हैं।

विधि (Law)

सु-व्यवस्था बनाएं रखने, समुचित सामाजिक-आर्थिक उत्थान, व्यक्ति के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास एवं कार्य-व्यवहार के नैतिक मार्गदर्शन हेतु कानून बनाता है। कानून या विधि (Law) किसी देश की विधायिका (Legislative) द्वारा निर्मित किया जाता है। यह लोगों पर कुछ दायित्व आरोपित करता है। यह लोगों को कुछ करने अथवा कुछ न करने के लिए प्रेरित करता है। चूंकि विधि किसी कार्य के लिए होता है। अत: इसे कुछ शर्तें पूरी करनी होती है।

1. यह युक्तियुक्त होना (Reasonable) चाहिए।
2. विधि जिसको वर्णित (Prescribe) करता है वह अच्छा (Good), संभव (Possible) और न्यायपूर्ण (Just) होना चाहिए।
3. यह मानव स्वभाव से संगत होना चाहिए तथा शारीरिक व मनोवैज्ञानिक पहुंच के क्षेत्र (Domain) में होना चाहिए।
4. विधि को व्यक्तिगत हित की बजाय सामान्य हित की ओर लक्षित होना चाहिए।
5. विधि लोगों की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं के अनुरूप एवं सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों से समर्थित होनी चाहिए।
6. आधिकारिक संस्था द्वारा समुचित प्रक्रिया का पालन करते हुए विधि का निर्माण किया जाना चाहिए।

कानून नैतिक प्रहरी के रूप में काम करते हैं। परंतु सामाजिक विकास के साथ-साथ कानूनों में भी परिवर्तन होता है। कई बार सामाजिक परम्पराएं ही कानून का रूप ले लेती है। उदाहरणस्वरूप- हिन्दू विवाह अधिनियम, मुस्लिम पर्सनल लॉ आदि। परंतु कई बार सामाजिक परम्पराएं प्रगतिशील मानवीय मूल्यों के विपरित हो जाती है। ऐसी स्थिति में उन परम्पराओं के विपरित कानून को भी उचित माना जाता है। उदाहरणस्वरूप:- शारदा एक्ट (बाल विवाह निरोध अधिनियम, 1929), जिसके माध्यम से बाल विवाह को गैर कानूनी घोषित किया गया।

कानून एवं नैतिकता के अंतर्विरोध

नैतिक कर्त्तव्य एवं कानूनी दायित्व हमेशा एकरूप नहीं होते। उदाहरणस्वरूप-

1. यह आवश्यक नहीं है कि जो नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित है, वह कानूनी दृष्टिकोण से भी गलत हो। जैसे - झूठ, ईर्ष्या, लोभ, द्वेष आदि नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित है, परंतु यह कानूनी दृष्टिकोण से अपराध नहीं है। अगर झूठ बोलकर किसी को ठगा जाता है तब वह नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित एवं कानूनी दृष्टिकोण से अपराध हो जाता है।
2. पुन: जो गैर-कानूनी है वह नैतिक दृष्टिकोण से उचित हो सकता है। उदाहरणस्वरूप - गर्भपात गैर-कानूनी है, परंतु महिला के जीवन रक्षा हेतु यदि यह आवश्यक हो तो फिर उसे उचित माना जा सकता है।
3. कई बार कानून पुराने, अनुपयोगी एवं अप्रासंगिक हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में उन कानूनों के आधार पर नैतिकता का निर्धारण करना उचित नहीं माना जा सकता।
4. आपदा आदि के समय, जब तत्काल निर्णय लेने कि आवश्यकता हो उस समय कानूनी प्रक्रियाओं का पालन न करते हुए भी आपदा ग्रस्त इलाके में सहायता पहुंचाना और विपत्ति में पड़े लोगों के जान-माल की रक्षा करना, नैतिक दृष्टिकोण से उचित माना जाएगा।

नियम और विनियम (Rules and Regulations)

	विधि (Law)	नियम (Rule)	विनियम (Regulations)
बनाने का अधिकार →	*संसद/विधानमंडल (Legislative)*	*कार्यपालिका (Executive)*	*विनियामक संस्थाएं (Regulatory Bodies) Ex. TRAI, SEBI, IRDA, etc.*

कानून, नियम और विनियम में कानून की स्थिति सर्वोच्च होती है। कानून का ही व्याख्यान, विस्तारण एवं स्पष्टीकरण नियम और विनियम के माध्यम से किया जाता है, ताकि कानून को व्यावहारिक रूप दिया जा सके, उसकी मूल भावना को साकारित किया जा सके।

नियम (Rule)

प्रत्येक कानून (Law) में उसके क्रियान्वयन के लिए आवश्यक नियम (Rule) बनाने के प्रावधान निहित होते हैं। ये नियम कानून की मूल भावना से संगति रखते हुए उनकी व्याख्या, स्पष्टीकरण एवं विस्तारण करते हैं, ताकि कानून को सरलतापूर्वक, प्रभावी रूप से लागू किया जा सके। नियम निर्माण की शक्ति प्रत्येक देश की कार्यपालिका (Executive) शाखा में निहित होती है। नियम विधि से परे नहीं जा सकते और वे विधायिका के अनुमोदन (Legislative Ratification) के अधीन होते हैं। विधायिका द्वारा कार्यपालिका को इस प्रकार के नियम बनाने कि शक्ति प्रदान करने को अधीनस्थ विधायन (Subordinate Legislation) या प्रत्यायोजित विधायन (Delegated Legislation) कहते हैं।

विनियम (Regulations)

विनियम का निर्माण विनियामकीय प्राधिकरण (Regulatory Authority) द्वारा किया जाता है। ये विधि और नियम को विस्तार देते हैं। उन्हें प्रायोगिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाते हैं। ये कार्य के तकनीकी एवं प्रक्रियात्मक पहलू से अधिक जुड़े होते हैं।

अंतर्रात्मा (Conscience)

मानव स्वभाव की रचना अनेक तत्वों से हुई है, जैसे- आवेग या वासना, आत्मप्रेम, परोपकार आदि। इनमें सर्वोपरि तत्व अंत:करण है। यह मनुष्य का आंतरिक विवेक एवं नैतिक शक्ति है। इसे मूलत: बौद्धिक माना जाता है। अंत:करण प्रत्येक व्यक्ति में स्थित सामान्य तत्व है। इसका विकास किया जा सकता है। कांट ने अपने दर्शन में अंत:करण को व्यावहारिक बुद्धि के रूप में स्वीकार किया है।

वे इसे नैतिक बुद्धि मानते हैं जो नैतिक नियम को ग्रहण करती है। कांट का यह मानना है कि अंत:करण कभी गलत नहीं हो सकती है। अशुद्ध अंत:करण एक कल्पना मात्र है।

अंतर्रात्मा से निर्णय लेते समय हमें यह सोचना चाहिए कि-

- लोगों कि हमसें क्या अपेक्षाएं हैं,
- अगर मेरी जगह कोई और होता तो मैं उससे इस समय क्या कार्य करने की अपेक्षा करता।

जैसे- आँखे लाल, पीले का साक्षात् प्रत्यक्ष करती है उसी प्रकार अंतर्रात्मा भी कर्मों के औचित्य और अनौचित्य का परिणाम पर विचार किये बिना साक्षात् प्रत्यक्ष करती है। इसीलिए इसे हृदय का प्रत्यक्ष (Perception of Heart) कहा जाता है।

मानव स्वभाव में अंत:करण वह मानसिक शक्ति है जो-

1. उचित और अनुचित में भेद का साक्षात् ज्ञान करती है।
2. नैतिक कर्मों को करने के लिए प्रेरित करती है।
3. नैतिक गुणों का तत्काल प्रत्यक्ष करती है।
4. उचित कार्य करने और अनुचित कार्य से विरत रहने के लिए उत्प्रेरित करता है, मार्गदर्शन देता है। इसी आंतरिक तत्व के आधार पर यह कहा जाता है कि मनुष्य अपना मानदंड स्वयं है। 'अंतर्रात्मा की आवाज' जैसे आह्वान उचित करने के लिए प्रेरित करते हैं।

समस्या समाधान एवं निर्णय प्रक्रिया में अंतर्रात्मा का प्रयोग तब किया जाना चाहिए जब

1. कानून, नियम, विनियम और प्रक्रियाएं स्पष्ट नहीं हों।
2. तथ्यात्मक आंकड़ें या कोई स्पष्ट उदाहरण उपलब्ध नहीं हो।
3. जब किसी प्राधिकार युक्त व्यक्ति को अपने विवेकाधिन शक्तियों का उपयोग करना हो।
4. तत्काल निर्णय लेने की आवश्यकता हो।

जैसे- आपदा आदि के समय में नियम और प्रक्रियाओं की अपेक्षा कार्य के निष्पादन एवं परिणाम पर बल चला जाता है। आपदा में फंसे हुए लोगों को बचाना ही मुख्य लक्ष्य हो जाता है, भले उस क्रम में नियमों और प्रक्रियाओं का समुचित पालन न हो रहा हो।

अंत:करण प्रत्येक मनुष्य में स्थित नैतिक बुद्धि है जिसका शिक्षा-दीक्षा के माध्यम से विकास हो सकता है। अंतर्रात्मा लोगों के जीवन अनुभव, नैतिक शिक्षा, उससे संबंधित कहानियों के पठन, चर्चा, मंचन, परिवार और समाज से ग्रहण किये गये मूल्यों पर निर्भर करती है। गांधी मतानुसार एकादश व्रतों से युक्त व्यक्ति ही अपनी अंतर्रात्मा की आवाज पर ध्यान देकर तदनुरूप कार्य कर सकता है। नैतिक दृष्टिकोण से यह माना जाता है कि सद्‌गुणी एवं साहसी व्यक्ति ही अंतर्रात्मा के अनुसार कार्य कर सकता है।

कानून एवं अंतर्रात्मा में अंतर	
कानून में वाह्य दबाव की स्थिति होती है।	अंतर्रात्मा में आंतरिक दबाव की स्थिति होती है।
इसमें दंड के भय एवं पुरस्कार के लोभ के माध्यम से कानून का अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है।	अंतर्रात्मा के उल्लघंन की स्थिति में अपराध बोध, पश्चाताप या आत्म ग्लानि का भाव उत्पन होता है।

लोक सेवाओं में उत्तरदायित्व (Accountability in Public Services)

लोक सेवाएँ, वैध सत्ता पर आधारित वे सेवाएँ हैं जिनको कार्य सम्पादन हेतु यथोचित अधिकार, आवश्यक सुरक्षा तथा पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। स्वाभाविक है कि इन सेवाओं में कार्यरत कार्मिकों का उत्तरदायित्व तथा जवाबदेयता भी सुनिश्चित होनी चाहिए, ताकि लोकसेवकों द्वारा सत्ता के सुविधापयोगी प्रयोग एवं मनमाने कार्यों को रोका जा सके तथा प्रशासनिक प्रक्रिया की कार्यकुशलता एवं प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सके। जनतांत्रिक सरकार में उत्तरदायित्व एवं नियंत्रण लोकप्रशासन के अनिवार्य पक्ष हैं। लॉर्ड एक्टन का कहना है कि- ''सत्ता भ्रष्ट करती है और पूर्ण सत्ता पूरे तौर पर भ्रष्ट करती है''।

'Accountability' का शब्दकोषीय अर्थ सामान्यत: *'कारण बताने के लिये बाध्य'* के रूप में किया जाता है। वस्तुत: उत्तरदायित्व की अवधारणा प्रशासकों की उस बाध्यता को इंगित करती है जिसके अंतर्गत उनको अपने कार्य निष्पादन एवं उन्हें प्रदान की गई शक्तियों के प्रयोग के ढंग का संतोषजनक लेखा-जोखा देना होता है।

उत्तरदायित्व (Accountability) की अवधारणा दायित्व (Responsibility) से कुछ संदर्भों में भिन्न है। प्रशासनिक उत्तरदायित्व संवैधानिक (Constitutional), वैधानिक (Legal), प्रशासनिक एवं नैतिक नियमों तथा उन पद्धतियों का कुल योग है जिनके द्वारा सरकारी अधिकारियों को उनके सरकारी कार्यों के लिये उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। दायित्व की अवधारणा व्यक्तिगत और नैतिक होता है तथा यह आवश्यक रूप से विधिवत पद या सत्ता से संबंधित नहीं होता है। दायित्व मनोगत है और अंतर्मन से काम करता है जबकि उत्तरदायित्व वस्तुगत है और बाहर से काम करता है।

दायित्व सार्वजनिक इच्छा के प्रति सरकारी कर्मचारी की प्रतिक्रियाशीलता को बताता है, जबकि उत्तरदायित्व सरकारी कर्मचारी के दायित्व को पूरा करने के विशिष्ट उपायों तथा कार्यविधियों को सूचित करता है।

सामान्यत: उत्तरदायित्व (Responsibility) तथा जवाबदेयता (Accountability) में विभेद नहीं किया जाता है फिर भी ***'उत्तरदायित्व' नैतिकता के भाव से परिपूर्ण है तथा 'जवाबदेयता' में औपचारिक एवं कानूनी बाध्यताएँ समाहित हैं।*** संवैधानिक प्रावधानों तथा राष्ट्रीय कानूनों के अनुसरण में संरचित प्रशासनिक संगठनों के कार्मिक संविधान तथा जनता के प्रति जवाबदेह है तथा प्रशासन का समस्त कार्य मानवीय आवश्यकताओं से संबंधित होने के कारण उसमें नैतिकतावश 'उत्तरदायित्व' का भाव भी अपेक्षित है। फिर भी 'जवाबदेयता' शब्द की सीमा में उत्तरदायित्व तो स्वत: ही सम्मिलित हो जाता है।

यह प्रश्न प्राय: उठाया जाता है कि लोक सेवक का मुख्य रूप से किसके प्रति उत्तरदायित्व है? यदि विशुद्ध प्रशासनिक एवं संगठनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो प्रत्येक कर्मचारी अपने उच्चाधिकारी के प्रति जवाबदेह है जबकि लोकतांत्रिक विचारधारा की ओर दृष्टिपात करें तो जनता जनार्दन सम्प्रभु दिखाई देती है। लोकतंत्र तो जनता का, जनता के लिए तथा जनता के द्वारा शासन का नाम है। अत: लोकतांत्रिक प्रशासनिक व्यवस्थाओं में लोकसेवक ***जनता के प्रति उत्तरदायी*** है।

भारत में विधि का शासन है अर्थात् हमारे यहाँ कानून सबसे ऊपर है। कानून का मुख्य स्रोत हमारा संविधान है जो संपूर्ण प्रशासन तंत्र को निर्देशित एवं नियंत्रित करता है। अत: लोकसेवकों की जवाबदेयता संविधान के प्रति है। संविधान के प्रावधाान एकमेवरूप से जन कल्याण के लिए है अर्थात् प्रशासनिक कार्यों का मुख्य लक्ष्य जन सेवा है। इस आधार पर भी लोकसेवक जनता के प्रति ही उत्तरदायी ठहरते हैं। साथ ही लोक सेवाओं में जनता द्वारा कठोर परिश्रम से कमाया गया धन व्यय किया जाता है इसलिए जनता की स्थिति लोक सेवकों के समक्ष उच्च ठहरती है। जनप्रतिनिधियों के माध्यम से गठित विधायिका, जो देश के कानून एवं नीतियों के निर्माण में सर्वोच्च है, के प्रति तथा कानूनों की व्याख्या करने वाली न्यायपालिका के प्रति भी लोक सेवकों की जवाबदेयता आवश्यक है। इस प्रकार स्पष्ट है कि लोक सेवकों की जवाबदेयता बहुमुखी है जिसमें स्वयं के प्रति जवाबदेयता भी सम्मिलित है। विशुद्ध तटस्थ भाव से देखें तो हम पाते हैं कि मनुष्य को स्वयं के प्रति भी न्यायवान होना चाहिए। कोई भी मनुष्य चाहे कितना ही क्रूर या मूर्ख क्यों न हो, उसकी अंर्तरात्मा हमेशा सच्चे न्यायाधीश की तरह सत्कर्म करने की ही प्रेरणा देती है। यह अलग बात है कि भौतिक सुखों की तीव्र आसक्ति एवं राग-द्वेष के कारण आत्मा की आवाज चंचल मन के सामने क्षीण हो जाती है।

लोक सेवकों की जवाबदेयता: विविध पक्ष

(a) संविधान के प्रति

(b) जवाबदेयता

(c) उच्चाधिकारी के प्रति (कार्यपालिका)

(d) जनता के प्रति

(e) व्यवस्थापिका के प्रति

(f) न्यायपालिका के प्रति

(g) स्वयं के प्रति

क्या भारतीय लोक सेवाएँ या इसके कर्मचारी जनता के प्रति जवाबदेह दिखाई देते हैं? निस्संदेह इसका उत्तर है कि अधिकांश मामलों में लोक सेवक जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होते हैं। लोक प्रशासन में वयाप्त अनुत्तरदायित्व की यह भावना प्राय: देखने को मिलती है, जैसे-

1. पुलिस हिरासत में मौत या दाँयी की जगह बाँयी टाँग का ऑपरेशन कर देना
2. कार्मिकों का अपनी निर्धारित सीट या जगह पर न मिलना
3. जनता द्वारा चाही गई सूचना का प्रत्युत्तर न देना
4. बार-बार शिकायत करने पर भी कार्यवाही न करना
5. जनता के साथ निरंकुश स्वामी-सा व्यवहार करना
6. प्रार्थना या आवेदन पत्र जमा कराने पर पावती तक न देना
7. विविध प्रकार के भ्रष्ट आचरण या विधियों से तंत्र को दूषित करना।

वस्तुत: भारतीय प्रशासनिक तंत्र नौकरशाही के कठोर नियमों तथा जटिल प्रक्रियाओं से ग्रस्त है जिसमें नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं का समावेश नहीं है। स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीतिक शक्ति का जिस प्रकार दुरुपयोग किया गया है उससे भी प्रशासन तंत्र में जवाबदेयता एवं कुशलता विकसित नहीं हो सकी है। यद्यपि प्रशासनिक तंत्र तथा कार्य प्रणाली में सुधार के लिए अनेक आयोग या समितियाँ गठित हुई हैं, जिनमें वाजपेयी समिति (1947), मितव्ययता समिति (1948), आयंगर समिति (1949), गोरवाला रिपोर्ट (1951), पॉल एच. एपलबी रिपोर्ट (1953), संथानम समिति (1964) तथा प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966) की विस्तृत रिपोर्ट इत्यादि सम्मिलित है; तथापि लोक सेवाओं में वांछित कुशलता तथा जवाबदेयता विकसित नहीं हो पाई है। हर्ष का विषय है कि विगत एक दशक से इस दिशा में गंभीरतापूर्वक सोचा जाने लगा है। अब राजनेता तथा प्रशासक दोनों ही बेझिझक सार्वजनिक रूप से यह स्वीकार करने लगे हैं कि हमारा तंत्र अनेक प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त है। अपनी गलती को स्वीकार कर लेना 'सुधार' का प्रथम चरण माना जाता है। निम्नलिखित कारणों से भारत में लोक सेवकों की जवाबदेयता के प्रति गंभीरता उत्पन्न हुई है-

1. शिक्षा के प्रसार के पश्चात् आम भारतीय चेतनायुक्त हुआ है, अत: अधिकारों की माँग बढ़ी है।
2. संचार के अति आधुनिक तथा सर्वसुलभ साधनों ने जनजागृति बढ़ाई है।
3. स्वयंसेवी संगठनों, दबाव समूहों तथा विपक्षी राजनीतिक पार्टियों ने प्रशासन तंत्र को सुधार हेतु विवश किया है।
4. न्यायालयों द्वारा लोक सेवकों के विरुद्ध टिप्पणियाँ तथा कठोर दण्ड दिया गया है।
5. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 से आम उपभोक्ता को राहत तथा न्याय मिलने से उत्साह बढ़ा है।
6. नई आर्थिक नीति (1991) के प्रवर्तन से परम्परागत प्रशासनिक जटिलताएँ कम करनी पड़ी है।
7. मानवाधिकारों की बढ़ती माँग ने परिवर्तन को दिशा दी है।
8. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के कारण शासन तंत्र में आम आदमी की भागीदारी बढ़ी है।
9. वैश्वीकरण तथा निजीकरण ने लोक सेवकों को प्रभावित किया है।
10. आम चुनावों में मतदाता की अरुचि ने राजनेताओं को आगाह किया है।

मंत्रियों तथा उच्च लोक सेवकों के द्वारा विवेकाधिकार का उपयोग भी नैतिक विवेचन का विषय है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा-21 के 12वें विश्लेषण में राजनीतिक मंत्री को भी लोक सेवक माना गया है (यद्यपि वह लोक सेवाओं का सदस्य नहीं होता) क्योंकि वह सरकार से वेतन पाता है। केन्द्रीय मंत्री कैप्टन सतीश शर्मा द्वारा अपनी इच्छा से आवंटित किए गए पेट्रोल पंपों को उच्चतम न्यायालय ने 25 सितम्बर, 1996 को विवेकाधिकार को पक्षपातपूर्ण, गैर-कानूनी तथा दुर्भावना से युक्त करार दिया था। इसी तरह लोक सेवकों के विरुद्ध जन-शिकायत की सुनवाई व्यवस्था की सुदृढ़ता प्रदान करके एवं नियमों या प्रपत्रों को सरलीकृत करके सकारात्मक प्रयास किए गए हैं। केन्द्रीय मंत्रालयों में बुधवार का दिन केवल जन समस्याओं की सुनवाई हेतु निश्चित किया गया है। विशेष अभियानों तथा संपर्क शिविरों के माध्यम से भी लोक सेवकों को जनता के प्रति जवाबदेहिता निर्धारित की जानी चाहिए। कुछ विभाग तो समाचार पत्रों में प्रकाशित जन समस्याओं या शिकायतों का लिखित उत्तर भी भेजने लगे हैं। जनता से नित्य प्रति संपर्क में आने वाले मंत्रालयों में केन्द्र सरकार ने 'सूचना पटल' स्थापित करने का निर्णय लिया है। पुलिस थानों में 'शिकायत अभिकरण' की स्थापना करने का मानस गृह मंत्रालय बना चुका है। इन अभिकरणों में पुलिस के विरुद्ध शिकायत न्यायिक अधिकारी, समाजसेवी तथा पूर्व पुलिस अधिकारी सुन सकेंगे।

नियामकीय प्राधिकरणों की ओर से मंजूरी में होने वाली देरी के कारण कई बार लागत में भी वृद्धि हो जाती है। समय पर क्लियरिंग नहीं होने के कारण परिवहन विलंब खर्च का सामना करना पड़ता है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों तथा निधि व्यवस्था (फंडिंग) में नैतिक मुद्दे
(Ethical issues in international relations and funding)

परम्परागत तौर पर यह माना जाता रहा है कि सरकार की नीतियों और योजनाओं का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रहित एवं सार्वजनिक हित की रक्षा करनी है। इसी के संदर्भ में नैतिक मूल्यों और मानदंडों की चर्चा भी होती है। परंतु वर्तमान वैश्वीकरण के युग में विभिन्न देशों में लगातार बढ़ रही आर्थिक अंतर्निभरता एवं विभिन्न आर्थिक संगठनों का उभार, आतंकवादी गतिविधियां, पर्यावरणीय संकट, उन्नत प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, लोगों की सरकार से बढ़ रही अपेक्षाओं एवं आकांक्षाओं के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों एवं फंडिंग में अनेक नैतिक मुद्दे वैश्विक पटल पर उभर कर सामने आ रहे हैं।

भारतीय संविधान के ***भाग-4 के अनुच्छेद-51*** के ***नीति-निर्देशक सिद्धांत*** में कहा गया है कि भारतीय राज्य अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा हेतु आगे बढ़ाने के लिए कार्य करेगा। देशों के बीच न्यायपूर्ण एवं सम्मानजनक संबंधों को बढ़ावा देगा। अंतर्राष्ट्रीय विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने के लिए काम करेगा और अंतर्राष्ट्रीय कानूनों एवं संधियों का सम्मान करेगा। भारत के अंतर्राष्ट्रीय दायित्व को निर्धारित करता है।

यही कारण है कि भारत संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में होने वाले विश्व शांति हेतु Peace Keeping Opreration में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। (शांति सैनिक भेजता है।)

नाभिकीय मुद्दा: वर्तमान में नाभिकीय शस्त्र विश्व शांति और सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा है। भारत प्रारंभ से ही नाभिकीय अस्त्रों के प्रसार-प्रचार का विरोधी रहा है। इसे भारत ने अनैतिक भी कहा बाद में हालांकि भारत ने भी इन्हें विकसित किया।

सामान्य पहलू: अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में राष्ट्रीय क्षेत्र के समान कोई सार्वभौमिक एवं संप्रभुता संपन्न शक्ति नहीं होती। व्यवस्था बनाए रखने कानून का अनुपालन करवाने के लिए कोई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था नहीं है इसके बावजूद अंतर्राष्ट्रीय कानूनों (Public International Law) का विकास हुआ है जिसके अंतर्गत विभिन्न देशों एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के पहलू निर्धारित होते है और विभिन्न देश स्वेच्छा से इसे स्वीकार करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में यह भावना अभी विकसित हुई है कि कुछ ऐसे नियम (The Cogens) होने चाहिए जो कि आमूल सिद्धांत है, (Natural Law) पर आधारित है और इनको सभी देशों को मानना आवश्यक है।

PEREMPTORY NORMS: ऐसे नियम या मानदंड जो प्राकृतिक नियमों पर आधारित है जो अमूल्य तत्व है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में जिनका अनुपालन होना चाहिए। **उदाहरण-** Genocide नहीं करना।

अधिकतर मामलों में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नैतिकता समझौतों पर आधारित होते हैं जो कि स्वेच्छा से लागू होते हैं। **उदाहरण-** राजदूतों के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय समझौता जिसके अंतर्गत कोई देश अन्य देश के राजदूतों एवं दूतावास से जुड़े व्यक्तियों के विरूद्ध कार्यवाही नहीं करेगा।

ICJ, ICC जैसे न्यायालयों का कार्यक्षेत्र सीमित होता है जो इनके सदस्य है और जो इनके कामकाज से मान्यता देते हैं उन्हीं देशों तक इनका कार्यक्षेत्र होता है। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य ICJ के सदस्य है। परंतु ICC के लिए वहीं सदस्य है जो उसकी सदस्यता लेते हैं। संयुक्त राष्ट्र का सुरक्षा परिषद किसी मामले को ICC में Refer कर सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में नैतिकता का महत्व सीमित है परंतु कई मामलों में करते है। कई को The Logens का दर्जा प्राप्त है। फिर भी राष्ट्रीय हित ही प्राथमिक होते हैं।

उदाहरण- जासूसी करना, विदेशी में लोगों को पैसा देकर या ब्लैकमैल करके उनसे जानकारी लेना अपने देश के विरूद्ध उनसे विश्वासघात करवाना। इस तरह की गतिविधियों अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में वैध मानी जाती है। भले ही वे अनैतिक होती है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में आर्थिक मुद्दे: वैश्विक स्तर पर कुछ देश बहुत धनी एवं संपन्न है जबकि अनेक देश निर्धन एवं पिछड़े है। इसी संदर्भ में आर्थिक मसलों का महत्व होता है। कहा जाता है कि एक न्यायसंगत अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था (Just International Economic Order) की स्थापना होनी चाहिए जिससे गरीबी देशों को भी संसाधन उपलब्ध हो तथा वैश्विक स्तर पर गरीबी और पिछड़ेपन से निपटने में सहायता मिले। आज जबकि अधिकांश देश मानवतावादी लक्ष्य को स्वीकार करते हैं। ऐसी स्थिति में यह अनैतिक होगा कि कुछ देशों के नागरिक अति संपन्न एवं विलासी जीवन व्यतीत करे जबकि अधिकांश देशों के लोग अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में भी असमर्थ रहे। यह मानवीय मूल्यों के भी विपरीत है।

इसी दृष्टिकोण से 2000 में (Millennium Development Goal-MDG) को अपनाया गया जिसमें गरीबी से निपटने में संपन्न देशों की भी नैतिक जिम्मेदारी मानी गयी कि वे अपनी क्षमता के अनुसार इसमें सहयोग करें। पहले विदेशी सहायता मुख्यत: राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिकोण से रणनीति तहत दी जाती थी कि संबंधित देश सहायता देने वाले देश के लिए कितना उपयोगी हो सकता है। अब बदले दृष्टिकोण में मानवीय मूल्यों एवं जिम्मेदारियों से जोड़ा गया। (Shaved Humanity के तौर पर)

मानवता विकास एवं रक्षा हेतु फंडिंग करने में अधिकांश धनी देश स्वीकृत मापदंडों (कम से कम 1% कि जीडीपी सहायता के तौर पर दिया जाना चाहिए। बाद में UNO ने 0.7% जीडीपी दिया जाना चाहिए जबकि USA GDP का 0.2% देता है) का अनुपालन नहीं करते। कुछ देश जैसे- स्कैन्डेनिवाई देश (फिनलैंड, स्वीडन, नार्वे आदि) इन मानदंडों का पालन करते हैं। कारण है कि अधिकतर देशों की अपनी समस्याएं है। वित्ततीय एवं आर्थिक समस्याएं गंभीर है और ऐसी स्थिति में उनसे अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे बड़ी राशि अन्य देशों के लिए उपलब्ध कराते रहे। इस तरह की सहायता भी बहुत सफल नहीं होती। गरीब देशों का विकास उनके आंतरिक प्रयास पर निर्भर करता है। विदेशी सहायता पर कम है।

इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में भी असमानता है जो कि अन्यायपूर्ण है। आज भी बड़े देशों की सहायता मुख्यत: राजनीतिक आधार से जुड़ी होती है।

अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में बहुपक्षीय संस्थाएं भी सहायता देती है, जैसे-World Bank, IMF, ADB

इसमें निष्पक्षता की अपेक्षा की जा सकती है परंतु इनके कामकाज में भी विकसित देशों का मुख्य नियंत्रण होता है अत: इन संस्थाओं के प्राथमिकताओं का निर्धारण भी मुख्य रूप से विकसित देशों के द्वारा ही किया जाता है। इनके कामकाज पर भी राजनीतिक लक्ष्यों का प्रभाव पड़ता है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में नैतिक मुद्दे (Ethical Issues in International Relations)

अंतर्राष्ट्रीय नीतिशास्त्र (International Ethics) अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत का वह क्षेत्र है जो इस बात से संबंधित है कि वैश्वीकरण के इस युग में राज्यों के संबंधों के निर्धारण में नैतिक दायित्व का कितना स्थान है और उसकी क्या संभावना है। अंतर्राष्ट्रीय संबंध में नैतिकता के मुद्दे पर विभिन्न विचारधारा पम्परा के चिंतकों द्वारा अलग-अलग मत प्रस्तुत किया गया है। इसमें **यथार्थवादी, उदारवादी, मार्क्सवादी** विचाराधारा के साथ ही साथ **(Cosmopolitanism)** और **(Anti-Cosmopolitanism)** जैसी विचारधाराएं शामिल है।

अंतर्राष्ट्रीय आचरण को नैतिक, मूल्यों एवं आदर्शों के आधार पर अनुशासित करने के काम को जर्मन दार्शनिक **इमैनुअल कांट** के चिंतन ने आगे बढ़ाया। उसका मानना था कि व्यक्तियों के समाज में व्यक्तियों की तरह सम्प्रभु राज्यों के लिए भी सहकार संभव ही नहीं एक अनिवार्यता भी है। मानव गरिमा तथा नैतिक नियम को इसके निर्धारक तत्व माना जाता है। राजनीति को कानून के माध्यम से नैतिक साध्यों की सिद्धि का साधन बनना चाहिए।

यथार्थवादियों का मत है कि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में राष्ट्रहित को सर्वोच्च वरीयता प्रदान किया जाता है। नैतिकता द्वितीयक स्थान रखती है अथवा यह अव्यावहारिक होती है। इनका मत है अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य अराजकता पूर्ण है तथा संसाधनों को प्राप्त करने के संबंध में प्रतिस्पर्धा पूर्ण है। राज्यों के ऊपर प्रभाव रखने वाली कोई सत्ता नहीं है। व्यवस्था स्थापित करने वाली (Superior power) के अभाव में अंतर्राष्ट्रीय मामलों में नैतिकता टिक (Sustain) नहीं सकती।

अत: आवश्यकता के अभाव में (Out of necessity) अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों राष्ट्रों को इस बात के लिए बाध्य कर देती है कि वे अपने हितों की रक्षा अनैतिक तरीकों को इस बात के लिए बाध्य कर देती हैं कि वे अपने हितों की रक्षा अनैतिक तरीकों से करें। आत्मरक्षा की यह बाध्यता (Compulsion) उनके नैतिक कर्तव्यों को विघटित (Dissolve) कर देता है। यर्थाथवादी विचारधारा अंतर्राष्ट्रीय संबंध नीतिशास्त्र (Ethics) से संचालित न होकर स्वार्थ से संचालित होते हैं।

आदर्शवादी विचारधारा (Idealism) का मत है कि मानव विषयों (Human Affairs) का निर्धारण विश्वजनीन (Universal) सिद्धांतों के आधार पर होना चाहिए न कि राष्ट्रीय। इस प्रकार मानव संबंध चाहे वे घरेलू (Domestic) हो अथवा अंतर्राष्ट्रीय उनका निर्धारण **समरसता** (Hormony) और **सहयोग** (Co-operation) के आधार पर होना चाहिए। इसके अनुसार अंतर्राष्ट्रीय मामले एक जटिल परस्पर निर्भर (Interdependent) व्यवस्था के रूप में देखे जाएं।

नव आदर्शवादी विचारधारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद पर आधारित है। यह अंतर्राष्ट्रीयवाद और वैश्विक समाज (World Society) की पक्षधर है। यह विचार साझी मानवता (Common Humanity) में विश्वास करती है। इसके अनुसार सार्वभौम मानव अधिकार (Universal Human Rights) राष्ट्रों की संप्रभु सत्ता से भी ऊंचा स्थान रखते हैं।

बहुलवादी विचारधारा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के निर्धारकों का बहुलकर्ता मॉडल (Mixed actor model) प्रस्तुत करती है। इस विचारधारा का परिणाम यह हुआ कि **Green Peace** जैसी पर्यावरण समर्थक दल, MNCs, NGO, PLO जैसे संगठनों को भी हित समूह (Interest Group) के रूप में मान्यता प्रदान की।

Cosmopolitanism वैश्वीकरण के नैतिक आयाम पर बल देती है। यह **वैश्विक न्याय** (Global Justice) और वैश्विक नैतिकता (Global Ethics) विचारधारा को आगे बढ़ाती है। Peter Singer का मत है कि वैश्वीकरण की नैतिकता मांग करती है कि हमें इस प्रकार से कार्य करना चाहिए कि सभी प्रकार की वैश्विक पीड़ाओं (Global Suffering) के स्तर को घटाया जा सके। **एक विश्व** (One World) की भावना पर आधारित है। यह विचारधारा **वैश्विक न्याय** (Global Justice), **सार्वभौम अधिकार** (Universal Rights) और **वैश्विक दायित्व** (Global Responsibility), **सीमाओं से परे न्याय** (Justice Beyond Borders) तथा **नैतिक समझ का वैश्वीकरण** (The Globalization of Moral Sensibilities) आदि से प्रेरित है।

थ्यानमेन चौक से **चेचन्या** तक तथा **ग्वान्टानामो बे** से **अबूघरेब** जेल तक हुए मानवाधिकारों के उल्लंघन पर वैश्विक समुदाय ने जो तीखी प्रतिक्रिया जाहिर की वह इसी विचारधारा का प्रतिबिंबन है।

मानवीय हस्तक्षेप (Humanitarian Intervention) एक सैन्य हस्तक्षेप (Military Intervention) है जो कि मानवीय उद्देश्य (Human Pursuit) से किया जाता है न कि सामरिक उद्देश्य (Strategic Objective) से। किंतु परम्परागत विश्व राज्यव्यवस्था (State System) गैर-हस्तक्षेप (Non Intervention) पर आधारित है। अत: नैतिक प्रश्न यह उठता है कि हस्तक्षेप की वैधता (Legitimacy) तथा नैतिकता के क्या आधार हैं? कुछ लोग इसे 'इरादे' (Intention) के आधार पर परिभाषित करते हैं, अर्थात् हस्तक्षेप तभी मानवीय (Humanitarian) माना जाएगा जब यह मुख्यतया इस इच्छा से अभिप्रेरित हो कि दूसरे लोगों को क्षति से बचाया जा सके। जबकि अन्य लोग मानवीय हस्तक्षेप को इसके परिणाम (Outcomes) के आधार पर परिभाषित करते हैं; अर्थात् यदि इससे शुद्ध रूप से मानव पीड़ा को कम किया जा सके और उनकी दशा सुधारी जा सके। किंतु मानवीय हस्तक्षेप के विगत कुछ उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि इनके पीछे मिले-जुले व जटिल प्रेरक (Motives) हो सकते हैं जैसे- हैती में USA मानवीय हस्तक्षेप अंशत: इस इच्छा से अभिप्रेरित था कि USA में हैतियन शरणार्थियों के प्रवाह को रोका जा सके। कोसोवो में किया गया NATO हस्तक्षेप भी शरणार्थी समस्या से बचने तथा क्षेत्रीय अस्थिरता फैलने से रोकने के लिए किया गया। किंतु 9/11 के पश्चात USA के नेतृत्व वाली सेनाओं द्वारा ईराक में सत्ता परिवर्तन तथा अफगानिस्तान में NATO सेनाओं द्वारा 'आतंकवाद के विरूद्ध युद्ध' (War Against Terrorism) के नाम पर किए जाने वाले सैन्य हस्तक्षेप के नैतिक आधार की काफी आलोचना भी हुई है।

हस्तक्षेप और राज्य संप्रभुता पर अंतर्राष्ट्रीय आयोग (International Commission on Intervention and State Sovereignty-ICISS) द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट **The Responsibility to Protect (R2P)** में सैन्य हस्तक्षेप के लिए दो निर्धारक (Two Criteria) बताये हैं-

1. बड़े पैमाने पर जन हानि (Large scale loss of life)
2. बड़े पैमाने पर नृजातीय सफाया (Large scale ethnic cleansing)

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के देश एक-एक करके स्वाधीन होने लगे। किंतु ये केवल राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हो पाये आर्थिक रूप से नहीं क्योंकि ये नव उपनिवेशवाद के जाल में फंस गये। फलत: इस बात पर बल दिया जाने लगा कि आर्थिक संबंधों का निर्धारण न्याय और लोकतांत्रिक आदर्शों के आधार किया जाना चाहिए। अत: एक **नयी अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था** (New International Economic Order) की मांग की जाने लगी। इसका अभिप्राय है- विकासशील देशों का विकास पूंजीवादी देशों की इच्छा पर निर्भर न रहे, बहुराष्ट्रीय निगम उन्हें कच्चा माल उत्पन्न करने वाला उपनिवेश न समझे। विश्व अर्थव्यवस्था का संचालन एक-दूसरे की संप्रभुता का सम्मान, अहस्तक्षेप तथा कच्चे माल पर उत्पादक राष्ट्र का पूर्ण अधिकार आदि सिद्धांतों पर हो।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने सर्वप्रथम मई 1974 में एक नयी आर्थिक व्यवस्था की स्थापना पर घोषणा तथा कार्यक्रम (The declaration and the programme of action on the establishment of a new international economic order) को अपनाया

था, जो इस प्रकार था- सभी राज्यों के बीच उनकी आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों का विचार किए बिना **साम्यता** (Equity), **प्रभुसत्ता की समानता** (Equality of sovereignty), **परस्पर निर्भरता, सामान्य रूचि** और **सहयोग** पर आधारित एक नव अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना के लिए शीघ्रता से कार्य करना जो असमानताओं को ठीक करेगा तथा वर्तमान अन्यायों का निवारण करेगा, विकसित तथा विकासशील देशों के बीच विस्तृत हो रहे अंतरों को समाप्त करना संभव करेगा और वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिए शांति तथा न्याय और आर्थिक एवं सामाजिक विकास को त्वरित करना सुनिश्चित करेगा।

दिसम्बर 1974 में संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा ने राज्यों के आर्थिक अधिकारों एवं कर्तव्यों का चार्टर अपनाया जिसमें यह बल दिया गया कि-'साम्यता प्रभुसत्ता की समानता तथा विकसित तथा विकासशील देशों की **परस्पर निर्भर रूचियों** (Shared Interest) पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों की एक नयी प्रणाली की स्थापना की ओर यह चार्टर एक प्रभावी औजार होगा।' एक खुशहाल विश्व के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि विश्व के विभिन्न देशों की पारस्परिक आर्थिक क्रियाएं न्याय, समानता, औचित्य और शोषण रहित समाज पर आधारित हों।

अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की पुनर्संरचना (Restructuring), **पुनर्निर्माण** (Remaking) इस प्रकार हो जिससे विश्व के आय साधनों तथा व्यापार का सभी देशों में समान और उचित बंटवारा हो सके। उत्तर-दक्षिण के मध्य आर्थिक-विकासात्मक अंतराल (Widening Gap) पाटा जा सके।

अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक संस्थाओं में सुधार, विश्व के आर्थिक संबंधों की पुनर्संरचना (Restructuring world economic relations) विकसित एवं विशालशील देशों के संबंधों को न्यायपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है। विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF), पेटेंट रिजीम (Patent Regime), आदि पर विकसित राष्ट्रों का आधिपत्य हैं। स्वायत्त, निष्पक्ष, पारदर्शी, तथा लोकतांत्रिक बनाने हेतु विकसित पश्चिमी राष्ट्रों के अनुचित प्रभाव से मुक्त कराया जाए। पूंजीगत स्रोतों का स्थानांतरण: तीसरी दुनिया के राष्ट्रों को किया जाए तथा अति ऋण ग्रस्त राष्ट्रों की ऋणों को समाप्त किया जाय और विकसित राष्ट्र अपने जीएनपी का 0.70% विकासशील राष्ट्रों को विकास निधि (Development Fund) के रूप में अनुदत्त करें।

विकसित देशों के MNCs द्वारा विकासशील देशों में अपने औद्योगिक उत्पादन केन्द्र लगाये जाते हैं। किंतु आद्योगिक दुर्घटनाओं के घटित हो जाने की स्थिति में वे अपनी नैतिक एवं कानून **जिम्मेदारी (Liability)** से मुखर लगते हैं। उदाहरण के लिए-भोपाल गैस त्रासदी के पश्चात अमेरिकी की बहुराष्ट्रीय कंपनी यूनियन कार्बाइड द्वारा न तो पीड़ितों को उचित मुआवजा प्रदान किया और न ही अमेरिका द्वारा इसके तत्कालीन मुख्य कार्यकारी को भारत में कानूनी प्रक्रिया का सामाने करने के लिए प्रत्यार्पित ही किया जा रहा है।

मानवाधिकार (Human Right) जैसे सार्वभौमिक मुद्दे को दुष्प्रचार (Propaganda) के संग्राम में हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा है। मानवाधिकारों के उल्लंघन का आरोप लगाकर अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्र किसी विपक्षीय सम्प्रभु राष्ट्र के आंतरिक मामलों में बहुपक्षीय हस्तक्षेप कर सकते हैं। अफगानिस्तान से लेकर इराक तक सैन्य हस्तक्षेप से सत्ता परिवर्तन को तर्क संगत ठहराने का अमेरिकी राजनय इसी सोच पर आधारित है।

एमनेस्टी इंटरनेशनल एक विश्व प्रसद्धि मानव अधिकार संगठन है। इसका जाल विश्वव्यापी है किंतु उसकी तटस्थता तथा निष्पक्षता कई बार संदेह के घेरे में दिखाई देती है। उसको प्राप्त होने वाली अनुदान एवं आर्थिक सहायता को लेकर भी शंकाएं व्यक्त की जाती है। मानव अधिकार संगठन **एशिया वॉच** के ऊपर भी आक्षेप लगाया जाता है कि इसका उपयोग अमेरिका अपने विपक्षियों को कठघरे में खड़ा करने के लिए करता रहा है।

मास मीडिया (Mass Media) के रूप में उपग्रह आधारित टेलीविजन चैनल तथा इंटरनेट की भूमिका संचार माध्यम के रूप में काफी तेजी से बढ़ी है। सैटलाइट से होने वाले टेलीविजन प्रसारण पर राष्ट्रों की सीमाओं का कोई अंकुश नहीं होता। साथ ही इनका नियंत्रण पश्चिम के समृद्ध राष्ट्रों के मीडिया मालिकों के हाथों में है जो अपने संबद्ध राष्ट्रों के राजनीतिक दबावों या अपने व्यावसायिक स्वार्थों को प्राथमिकता प्रदान करते हैं। साथ ही इनका प्रयोग जनमत पर प्रभाव पैदा कर विचारों के संघर्ष में हथियार की तरह किया जाता है। इसी प्रकार इंटरनेट की सार्वभौमिक स्वतंत्रता और स्वाधीनता एक मिथक ही है। जिन परिष्कृत कम्प्यूटर सर्वरों पर यह संजाल (नेटवर्क) आधारित है। वह मुख्यत: अमेरिका में ही स्थित हैं और इनके ऊपर अमेरिका की सम्प्रभु सरकार का नियम कानून लागू होता है। गूगल अर्थ (Google Earth) द्वारा भारत के सामरिक रूप से संवेदनशील स्थानों एवं सीमावर्ती इलाकों के मानचित्रों को नेट पर अपलोड किये जाने से राष्ट्रीय सुरक्षा की चिंता उत्पन्न हुई थी। आईसीटी के माध्यम से फैल रही समरस उपभोक्तावादी संस्कृति विश्व की सांस्कृतिक विविधता को नष्ट करने वाली तथा पश्चिमीकरण/अमेरिकीकरण का वाहक बन रही है।

पर्यावरण (Environmental Issue) का मुद्दा आज अंतर्राष्ट्रीय चिंता का विषय बना हुआ है। यह पूरे मानव समुदाय के भविष्य ही नहीं बल्कि पूरे पृथ्वी के स्वास्थ्य से जुड़ा सार्वभौम मुद्दा है किंतु इसके बाद भी अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में इसके प्रति कोई आम सहमति नहीं बन सकी है क्योंकि दुनिया के राष्ट्रों के पर्यावरण संबंधी सरोकार अलग-अलग है। ग्रीन हाउस गैसें के उत्सर्जन में कटौती संबंधी **क्योटोप्रोटोकॉल** (Quoto Protocol) पर अमेरिका द्वारा हस्ताक्षर न किया जाना। उसकी दो-मुंही नीति (Double Speak) का परिचायक है। अनेक विकासशील देशों का मानना है कि विश्व व्यापार संगठन द्वारा प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रणाली में पर्यावरण का प्रयोग शुल्केत्तर बाधा के रूप में किया जाने लगा है।

जैव विविधता (Biodiversity) के साथ जुड़ा है पारंपरिक ज्ञान और बौद्धिक संपत्ति के स्वामित्व का अधिकार। यह सवाल उठाया जाने लगा है कि क्या जैव विविधता के संरक्षण का अभियान चलाने वाली सरकार और गैर-सरकारी संस्थाएं तृतीय विश्व के देशों की इस पूंजी में सेंध तो नहीं लगा रही है।

20वीं शताब्दी में **जनतंत्र (Democracy)** को शासन का सर्वोत्तम माना जाने लगा। किंतु शीघ्र ही इसे पश्चिमी पूंजीवादी राज्यों ने अमेरिकी, ब्रिटिश, फ्रांसीसी राजनैतिक प्रणालियों का यर्थाथ बताकर पेश करना आरंभ कर दिया। किंतु एशिया अफ्रीका और लैटिन अमेरिक के अनेक देशों में जिस राजव्यवस्था की की स्थापना हुयी वह पश्चिमी नमूने के जनतंत्र से बहुत फर्क वाली थी, पर पश्चिम के राजनीतिशास्त्री इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है कि जनतंत्र का कोई दूसरा गैर-पश्चिमी स्वरूप भी हो सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद (International Terrorism) की समस्या विश्व के देशों के **अंतर्राष्ट्रीय कूटनीतिक संबंधों** को प्रभावित करने वाला एक बड़ा मुद्दा बनकर उभरा है। आतंकवादी एक राज्य को निशाना (Target) बनाते हैं, तो दूसरे को शरणगाह (Sanctuary) के रूप में प्रयोग करते हैं। वे आर्थिक सहायता, काडर की भर्ती, प्रशिक्षण आदि के लिए विभिन्न देशों में फैले तंत्र का प्रयोग करते हैं। उन्हें कुछ देशों की गुप्तचर एजेंसियों का भी उन्हें सक्रिय समर्थन एवं सहयोग प्राप्त होता है क्योंकि विश्व के कुछ देश आतंकवादी संगठनों का परोक्ष इस्तेमाल अपने कूटनीतिक लाभों के लिए अथवा प्रतिपक्षी को अस्थिर बनाने के लिए भी करते हैं। यह अंतर्राष्ट्रीयतावाद एवं शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की विचारधारा के विपरीत है।

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के नेटवर्क, कार्य प्रणाली को देखते हुए यह स्पष्ट है कि इसके रोकथाम के पर्यत्न एकपक्षीय सैन्य कार्यवाही अथवा उभयपक्षीय राजनय द्वारा नहीं अपितु अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की सामूहिक जिम्मेदारी द्वारा किया जा सकता है। अत: अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के विरूद्ध लड़ा जाने वाला कोई भी वैश्विक युद्ध (Global War) सामूहिक प्रयासों से ही सफल होगा न कि किसी एक राज्य अथवा कुछ राज्यों के संगठन द्वारा भले ही वह/वे कितने ही शक्तिशाली क्यों न हो। यही कारण है कि अमेरिका के नेतृत्व में नाटो स्थायी सफलता प्राप्त नहीं कर पा रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद एक ऐसा मुद्दा है जिसकी परिभाषा के बारे में आम सहमति नहीं है और इसी कारण इसके विरूद्ध अंतर्राष्ट्रीय मोर्चाबंदी सफल नहीं हो सकी है। मेरे देश में हो तो आतंकवाद और यदि तेरे देश में हो तो स्वतंत्रता संघर्ष। जैसे दोहरे मानदंड (Double Standard) आतंकवाद जैसे गंभीर मुद्दे पर मतैक्य स्थापित करने की दिशा में सबसे बड़ी बाधा हैं। इसी प्रकार राज्य प्रायोजित आतंकवाद (State Sponsored Terrorism) आतंकवाद का एक ऐसा स्वरूप है जिसमें एक राज्य अपने कूटनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरे राज्य में आतंकवादी गतिविधियों को प्रायोजित करता है। जो कि अंतर्राष्ट्रीय नैतिकता एवं विश्व शांति की दृष्टि से घातक है। उदाहरण के लिए- पाकिस्तान द्वारा कश्मीर व भारत के अन्य हिस्सों में इसी प्रकार का आतंकवाद फैलाया जा रहा है जो दोनों देशों के संबंधों के सामान्यीकरण में सबसे बड़ा बाधक मुद्दा है तथा क्षेत्रीय शांति की दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील है।

इसी प्रकार आतंकवाद को प्रत्यक्षत: इस्लाम धर्म से जोड़कर **इस्लामोंफोबिया** (Islamophobia) फैलाना तथा एक धर्म के विशेष के लोगों का संबंध आतंकवाद से जोड़ना नैतिक दृष्टि से उचित नहीं है।

अंतर्राष्ट्रीय राजनय में परमाणु मुद्दा एक बड़ा नैतिक मुद्दा है। एक और तो इसका अस्तित्व विश्व की सामूहिक सुरक्षा (Collective Security) तथा हमारी सभ्यता के साझे भविष्य (Common Future) के लिए खतरनाक है। अत: विश्व को परमाणु अस्त्र से मुक्त बनाना सभी राष्ट्रों की नैतिक जिम्मेदारी है किंतु इनके नियंत्रण एवं अप्रसार के लिए परमाणु शक्ति संपन्न और परमाणु शक्ति रहित NPT, CTBT, FMCT आदि संधिया भेदभावपूर्ण है। साथ ही वे P-5 को मान्यता देकर Have's और Have's Not की भेदभावपूर्ण विभाजक रेखा खीचती है और इस प्रकार परमाणु नैतिकता (Atomic Ethics) का यह दोहरा मानदंड है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में **बौद्धिक संपदा अधिकारों** (Intellectual Property Rights) की सुरक्षा के लिए पेटेंट कानून (Patent laws) का प्रावधान है जो अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है। किंतु पेटेंट कानून के नाम पर जीवन रक्षक दवाओं को उनके निर्माण लागत से 100 से 200 गुना अधिक कीमतों पर बेचा जाना मानवतावादी विचारधारा के नैतिक मानदंडों का उल्लंघन है। विशेषकर ऐसी स्थिति में जब ये दवाएं गरीब देशों के अति निर्धन लोगों तक पहुंचाई जानी हों।

अंतर्राष्ट्रीय निधि व्यवस्था में नैतिक मुद्दे *(Ethical Issues in International Funding)*

विश्व के विभिन्न देशों व समाजों के मध्य आर्थिक विकास जीवन के स्तर, संसाधनों की उपलब्धता तकनीकी विकास, मानव विकास के स्तर आदि दृष्टियों से व्यापक असमानतायें पायी जाती है जिससे साधन सम्पन्न एवं साधन विहीन अथवा धनी एवं निर्धन देशों व समाजों के मध्य अंतराल उत्पन्न हुआ है। अत: मानवीय व नैतिक दृष्टि से एक न्यायपूर्ण आर्थिक विश्व व्यवस्था के निर्माण गरीबी उन्मूलन पर्यावरण सुरक्षा मानव विकास आपदा राहत खाद्य सुरक्षा आदि जैसी गरीब देशों की समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक वित्त जुटाने हेतु परस्पर सहयोग की भावना एवं मानव कल्याण तथा पर्यावरण सुरक्षा की भावना आदि से प्रेरित होकर विश्व के सक्षम देशों, अंतर्राष्ट्रीय दावा संस्थाओं, स्वयं सेवी संगठनों, अंतर-सरकारी संगठनों, दानदाताओं (Philanthropist) पूंजीपतियों द्वारा निर्मित कोष को अंतर्राष्ट्रीय निधि व्यवस्था की श्रेणी में रखा जाता है।

विकास नैतिकता के समर्थन में तीन तर्क रखे जाते हैं-

1. **सामान्य उदारता का सिद्धांत** जिसके प्रवक्ता पीटर सिंगर (Peter Singer) है, का मानना है उपयोगितावादी विचारधारा कहती है कि हमें ऐसे कार्य करने चाहिए जिससे समग्र खुशहाली (Overall Happiness) बढ़ती है तथा समग्र कष्टों एवं पीड़ा में कमी आती है।
2. **मानव अधिकारों का सिद्धांत** (Doctrine of Human Rights) के अंतर्गत विकास के अधिकार (Right to Development) के एक मानव अधिकार माना गया है। (Shue) का तर्क है कि लोगों का कर्तव्य लोगों को वंचित न करने (Not to deprive off) के साथ ही साथ लोगों की वंचना से मुक्ति दिलाना भी है।
3. **भूत के अन्यायों का परिमार्जन** (To rectify past injustices) करने के तर्क का आधार है कि उत्तर की सम्पन्नता भूतकाल में दक्षिण से संसाधनों के दोहन एवं दमन का परिणाम है। (विशेषकर उपनिवेशवाद एवं नव-उपनिवेशवाद द्वारा) अत: उनका परम नैतिक दायित्व बनता है कि वे अपने भूत के कृत्यों (Past Actions) का परिमार्जन करते हुए दक्षिण को क्षतिपूर्ति (Compensate) करें।

अंतर्राष्ट्रीय सहायता (International Aid) एक प्रमुख जरिया है जिसके माध्यम से सक्षम देश अपने विकासात्मक दायित्वों की पूर्ति करते हैं और दूसरे देशों में सामाजिक-आर्थिक विकास को बढ़ावा देने सहायता देते हैं। इस सहायता के रूप में निधि, संसाधन, उपकरण, कार्मिक एवं विशेषज्ञ शामिल होते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय निधि व्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण (Stake holders) निम्न हैं-

1. **राज्य द्वारा वित्त पोषित एजेंसियां** जैसे- अमेरिका की USAID, US mielonium challenge Coperation, डेनमार्क की DANIDA, जापान की JICA, कनाडा की CICA etc.
2. **अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं** जैसे- संयुक्त राष्ट्र संघ व उसकी अनुषंगी संस्थाएं, विश्व बैंक एवं उसकी अनुषंगी संस्थाएं, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, एशियाई विकास बैंक इत्यादि।
3. **अंतर-सरकारी संगठन** - भारत-ब्राजील-दक्षिण अफ्रीका कोष (India-Brazil-South Africa Fund) ओईसीडी (OECD) आदि।
4. **गैर-सरकारी संगठन** -
5. **दानदाता ट्रस्ट** (Philanthropic Trust) - Milinda & Bill Gates Fundation, Azim Premje Trust, Susan Thompson Waffet Fundation.
6. **कार्पोरेट सेक्टर** : उपरोक्त संस्थाएं, संगठन, एजेंसियां पिछड़े एवं गरीब देशों के विकास, आर्थिक असंतुलन को दूर करने, पर्यावरण संरक्षण, रोगों के रोकथाम के लिए टीकाकरण, पोषण स्तर के सुधार, आपदा राहत आदि जैसे मानवीय कार्यों के लिए सरकारों, गैर सरकारी संगठनों को निधि उपलब्ध कराती है। यह निधि सहायता अनुदान, ऋण, ऋण गारंटी, तकनीकी सहायता, सैन्य सहायता में अनुदान एवं ऋण आदि रूपों में उपलब्ध करायी जाती है।

ये निधियां सीधे राज्य सरकार या उसकी किसी एजेंसी गैर-सरकारी संगठन मिशनरियों अथवा बहुराष्ट्रीय संगठन को प्रदान की जाती है, जो इसका प्रयोग विभिन्न पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की परिपूर्ति में करती है।

अंतर्राष्ट्रीय निधि के स्वरूप

- अनुदान (Grants)
- ऋण (Debt)
- साख (Credit)
- तकनीकी सहयोग (Technical Assistance)
- ऋण गारंटी (Debt Guaranty)
- राहत कार्मिक एवं सामग्री (Relief workers & Materials)
- सैन्य सहायता (Military Assistance)

अंतर्राष्ट्रीय निधियों से जुड़े कुछ प्रमुख नैतिक मुद्दे-

1. अपने सकारात्मक रूप में अंतर्राष्ट्रीय निधियां विकास, स्थिरता, कल्याण, मानव गरीबी उन्मूलन, पर्यावरण की रक्षा, टीकाकरण, शिक्षा के प्रसार आदि मानवतावादी एवं न्यायसंगत नैतिक कार्यों के लिए आवश्यक वित्त उपलब्ध कराकर 'साझी मानवता' (Shared Humanity) की संकल्पना को चरितार्थ करती है तथा 'A Better World is Possible को हकीकत में बदलने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जो विश्व के देशों एवं समाजों को परस्पर निकट लाती है। एक न्यायपूर्ण विश्व अर्थव्यवस्था (Just International Economy) के निर्माण में मदद मिलती है जिससे विश्व शांति एवं स्थिरता को बढ़ावा मिलता है।
2. विश्व के देशों व संगठनों द्वारा नकारात्मक रूप से भी अंतर्राष्ट्रीय निधियों का प्रयोग भी किया जाता है। कुछ राज्य अपने **कूटनीतिक उद्देश्यों** की पूर्ति के लिए अथवा **वर्चस्व की स्थापना** के लिए इसका प्रयोग किसी राज्य सरकार को अस्थिर बनाने के लिए विरोधी गुटों को बढ़ावा देने उग्रवादी अथवा आतंकवादी संगठनों को धन व हथियारों से मदद करने में किया जाता है। उदाहरण के लिए इजराइल यह बार-बार आरोप लगाता है कि हिजबुल्ला आतंकवादी संगठन को ईरान व कुछ अन्य देशों से धन, हथियार तथा प्रशिक्षण प्राप्त होते है। इसी प्रकार कश्मीर के आतंकवादी संगठनों को पाकिस्तान द्वारा धन उपलब्ध कराया जाता है।
3. अमेरिका एवं अन्य आर्थिक महाशक्तियों के विदेशी सहायता दिए जाने के संदर्भ में गरीबी तथा पिछड़ेपन को आधार बनाने के बजाय निहित **कूटनीतिक एजेंडे** (Diplomatic Agenda) के तहत कुछ चुने हुए देशों को निधि समर्थन दिया जाता है। उदाहरण के लिए यह भलीभांति जानते हुए भी कि पाकिस्तान अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद का अग्रणी पोषक राज्य है, 9/11 की घटना के पश्चात तत्कालीन बुश सरकार द्वारा जनरल मुशर्रफ की सरकार को अरबों डॉलर की सहायता दी गयी।
4. अंतर्राष्ट्रीय दाता एजेंसियां (International Donor Agencies), जैसे- विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष OECD आदि द्वारा प्रदान की जाने वाली निधियों के साथ भी कई नैतिक प्रश्न जुड़े है। विश्व बैंक की सहायता एवं ऋण नीति की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि बैंक के निर्णयों पर पश्चिम के समृद्ध राष्ट्रों का अनुचित प्रभाव है जिनको बैंक में 43% मताधिकार प्राप्त है, साथ ही अर्द्ध विकसित राष्ट्रों को ऋण प्राप्त करने में कठिन शर्तों का सामना करना पड़ता है।
5. किसी सरकार को निधि या सहायता प्राप्त करने के लिए पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, सार्वजनिक क्षेत्र प्रबंध आदि मानदंडों को पूरा करना होता है। ओईसीडी (OECD) आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिए निम्न शर्तें रखती है-

   1. सहभागी विकास
   2. मानव अधिकार
   3. लोकतंत्रीकरण

इसी प्रकार विश्व बैंक व आईएमएफ द्वारा 1991 के आर्थिक संकट के समय भारत के समक्ष सहायता की पूर्व शर्त के रूप में 'संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम' (Structural Adjustment Programme-SAP) लागू करने की शर्त रखी गयी। प्रथम दृष्टया पश्चिमी दाता एजेंसियों का इस प्रकार का नीति गत दृष्टिकोण अहानिकारक लगता है, उदारवादी लोकतंत्र के हित को बढ़ावा देना उद्देश्य प्रतीत होता है तथापित इनकी इस नीति पर आलोचनात्मक टिप्पणियां भी की गयी है और कहा गया है कि यह संप्रभुता का अतिक्रमण करती है तथा पूंजीवाद के सिद्धांत का प्रसार करती है। इसीलिए प्रश्न उठाया गया है कि विश्व बैंक का वास्तविक इरादा क्या है? क्या इसका सरोकार लोकतंत्र से है अथवा प्रभुत्व से?

यद्यपि ऋणदाता एवं सहायता देने वाली एजेंसियां और अन्य बाहरी कारक शासन में सुधार के लिए संसाधनों एवं विचारों की दृष्टि से योगदान कर सकते हैं, परंतु परिवर्तनों के प्रभावी होने के लिए इसकी जड़ें संबंधित समाजों में दृढ़ता से आबद्ध होनी चाहिए और इसे बाहर से अधिरोपित नहीं किया जाना चाहिए। प्राय: यह देखा गया है बाह्य दबावों में किए गए सुधार (Exogeneous Reform) असतत व असंतुलित (Unsustainable and Imbalance) होते हैं।

वोल्फ गैंग साच्स, जो उत्तर विकास सिद्धांतवादियों में प्रमुख प्रवक्ता हैं, का मत है कि विकास का यह मॉडल जो पश्चिमी की एजेंसियों द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। कुछ नहीं बल्कि सम्पन्न अमेरिकी समाज के मॉडल को शेष विश्व के समक्ष प्रस्तुत करना है। विकास का यह **पश्चिमी मॉडल** (Western Model) धरती की समृद्ध सांस्कृतिक विविधता (Rich Cultural Diversity) के संरक्षण के प्रतिकूल है। साथ ही संसाधनों के संरक्षण और मितव्ययी विकास के नाम पर बाहर से आए विशेषज्ञों द्वारा स्थानीय संदर्भ और स्थानीय ज्ञान की प्राय: अवहेलना की जाती है। दरअसल एक विश्व, टिकाऊ विकास तंत्र, पारिस्थितिकी जैसे विभिन्न नारों की आड़ में एक वैश्विक व्यवस्था (Global Order) को प्रोत्साहित करने का ही प्रयास किया जा रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय दाता एजेंसियों द्वारा व 'सॉवरेन वेल्थ फंड' (Sovereign Wealth Fund-SWF) से गैर-सरकारी संगठनों को बड़े पैमाने धन का अंतरण किया जाता है। इस संबंध में भी कई बार कुछ नैतिक मुद्दे उभरते हैं। जैसे इनके चयन के प्राय: कोई निश्चित व कठोर व पारदर्शी मानदंड नहीं हैं। फलत: चुने हुए राजनीतिक प्रभाव वाले गैर-सरकारी संगठनों की फंडिंग कर दिया जाता है जो अवांछित गतिविधियों में लिप्त होते हैं। उदाहरण के लिए भारत में **कुडनकुलम परमाणु संयंत्र** के विरोध में चलने वाले उग्र विरोध आंदोलन में ऐसे एनजीओ की भूमिका की आशंका व्यक्त की गयी थी। इसी प्रकार रूस सरकार ने ऐसी संदिग्ध (Dubious) गतिविधियों में संलिप्त NGO's को मिलने वाली अवांछित विदेशी सहायता रोकने के लिए **'Foreign Agent Law'** पास करना पड़ा। कुछ NGO's द्वारा कागजों पर ही इस धन का प्रयोग किया जाता है।

पिछड़े एवं विकासशील देशों में कई **ईसाई मिशनरियां** कार्यरत हैं जो प्रस्तुत रूप में शिक्षा प्रसार, समाज सुधार कल्याण गतिविधियों में स्वयं को संबंधित दिखाती हैं किंतु उनमें से कुछ छद्म रूप में (Disguise form) **धर्मांतरण** के कार्यों में भी लगी होती हैं तथा लोगों को धन अथवा नौकरी का लालच दे कर धर्मांतरण कराती हैं, जिससे कई बार उनका स्थानीय समुदाय से टकराव व धार्मिक तनाव का मुद्दा भी उठ खड़ा होता है।

विकास निधियों की अपर्याप्तता का मुद्दा भी एक महत्वपूर्ण नैतिक मुद्दा है। मैक्सिको के शहर मोन्टेरी (Monterrey) में विश्व के देशों के प्रमुखों एवं प्रमुख विश्व संस्थाओं के प्रतिनिधि संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वाधान में हुए सम्मेलन (United Nations International Conference on Financing for Development- 22 March, 2002) में एक सहमति पर पहुंचे थे जिसे 'मोन्टेरी सहमति' (Monterrey Consensus) के नाम से जाना जाता है। इसमें धनी देशों द्वारा यह वचनबद्धता व्यक्त की गयी थी कि वे अपने जीएनपी (GNP) का 0.70% विकास निधि(Development Fund) के रूप में प्रदान करेंगे किंतु पांच ओईसीडी देशों (नार्वे, स्वीडन, लक्जमबर्ग, डेनमार्क और नीदरलैंड) को छोड़कर कोई अन्य देश इस लक्ष्य को प्राप्त न कर सका। संयुक्त राज्य अमेरिका 2008 तक अपने जीएनपी का केवल 0.18% ही अंतर्राष्ट्रीय विकास निधि के लिए प्रदान कर रहा था। यह धनी देशों की कथनी-करनी का भेद उजागर करता है साथ ही इससे **'संयुक्त राष्ट्र सहस्त्राब्दी लक्ष्यों'** (Millennium Development Goals-MDGs) को प्राप्त करने के लिए आवश्यक निधि जुटाने में भी कठिनाई होगी।

अंतर्राष्ट्रीय निधि के संदर्भ में वस्तुस्थिति यह है कि अधिकांश दाता देश उत्तर के देश है। अत: इसे उत्तर के देशों द्वारा दक्षिण पर अपने **प्रभुत्व स्थापना** (Supermacy) के उपकरण के रूप में भी देखा जाता है क्योंकि इन निधियों के साथ उन पर कुछ शर्तें भी थोपी जाती हैं तथा उनके स्वतंत्र नीति निर्माण के अधिकार को सीमित करती है जो उनके संप्रभुता पर अतिक्रमण है।

दक्षिण के देशों का यह भी मत है कि उत्तर के देश एवं बहुराष्ट्रीय निगम (MNCs) उनके प्राकृतिक संसाधनों के (विशेषकर खनिज तेल) दोहन से अपार धन सम्पदा का अर्जन कर रहे हैं जिससे उनके 'सॉवरेन वेल्थ फंड' (Sovereign Wealth Fund-SWF) का निर्माण हुआ है। वैश्विक न्याय के पक्षधर (Theorist of Global Justice) यह नैतिक सवाल उठाते हैं कि क्या इसका प्रयोग संबंधित राष्ट्र द्वारा अपने आर्थिक वर्चस्व को सुदृढ़ करने के लिए किया जाना चाहिए या अथवा वैश्विक न्याय के हित में अति गरीबी उन्मूलन, वैश्विक असमानताओं को कम करने के उद्देश्य से इस फंड का **पुनर्वितरण** (Redistribution) कर दिया जाना चाहिए।

विश्व के समृद्ध देशों द्वारा अपने SWF का उपयोग कई बार **पर्यावरण को क्षति** पहुंचाने वाली (Ecologically Damaging) परियोजनाओं अथवा विदेशों में संदिग्ध उद्योगों को लगाने में किया जाता है जिससे उनके राष्ट्रीय सुरक्षा (National Security) और राजनीतिक स्वतंत्रता की चिंता का प्रश्न भी उठ खड़ा होता है।

अंतर्राष्ट्रीय निधि के प्रयोग से पश्चिम के समृद्ध दाता देशों द्वारा उत्तर के पिछड़े देशों में जो विकास रणनीति अपनायी जा रही है उसमें विकास को एक सांस्कृतिक प्रक्रिया के रूप में न देखकर महज **तकनीकी हस्तक्षेप** (Technical Intervention) के रूप में देखा जाता है जिससे निम्न प्रमुख मूल्यात्मक प्रश्न उठ खड़े होते हैं-

1. सामुदायिक जीवन के मॉडल का चयन
2. समाज में न्याय के आधार
3. प्रकृति को लेकर सामाजिक दृष्टिकोण

प्राय: विकास के बाह्य अधिवक्ता इन प्रश्नों को हूबहू उन्हीं सांस्कृतिक दृष्टिकोणों से समझने में असमर्थ होते हैं। प्रसिद्ध कल्याण अर्थशास्त्री (Walfare Economist) अमर्त्य सेन ने **'विकास को स्वतंत्रता के रूप में'** (Development as Freedom) परिभाषित करते हुए इसे **मानव विकास** (Human Development) से जोड़कर देखा है।

डिजिटल अधिनायकवाद (Digital Authoritarianism)

डिजिटल अधिनायकवाद के तहत किसी भी राष्ट्र राज्य के नेतृत्व में बिग डाटा (वृहत मात्रा में डाटा का संग्रह) की सहायता से बड़े पैमाने पर नागरिकों, कम्पनियों तथा अन्य संस्थानों की निगरानी कर उनके व्यवहार को प्रभावित करके राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य सूक्ष्म, स्वचालित तथा अदृश्य तरीके से शासन पर राज्य की नियंत्रण क्षमता को बढ़ाना है।

पूंजीवाद के एक नए वैश्विक, डिजिटल और मोबाइल रूप के उदय ने 1970 के बाद से हमारे जीवन की गति को तेज कर दिया है। हम अधिक उत्पादन करते हैं, अधिक उपभोग करते हैं, अधिक निर्णय लेते हैं और अधिक अनुभव करते हैं। यह त्वरण अंतर्निहित सिद्धांतों से प्रेरित है कि 'समय पैसा है', 'समय शक्ति है' और 'जीवन छोटा है'।

मीडिया और संचार के दायरे में, हम इंटरनेट पर सूचनाओं के तीव्र प्रवाह वाले वैश्विक प्रवाह से सामना कर रहे हैं, जिसे हम अपने स्मार्टफोन, लैपटॉप और टैबलेट के माध्यम से हर जगह से लगातार एक्सेस करते हैं। फेसबुक, ट्विटर और यूट्यूब जैसे वाणिज्यिक प्लेटफॉर्म डिजिटल टैब्लॉइड हैं जो अक्सर सतही जानकारी के उच्च गति वाले प्रवाह को प्रसारित करते हैं जो कि कम ध्यान देने वाले स्पैन के साथ सेवन किया जाता है। सोशल मीडिया की सूचना त्वरण का प्राथमिक लक्ष्य लक्षित विज्ञापनों की बिक्री है तथा डिजिटल अधिनायकवाद, खंडित प्रचार, फर्जी समाचार, बॉट, फिल्टर बुलबुले और एक मादक 'मुझे' संस्कृति इस उच्च गति संचार के साथ-साथ सभी का प्रसार किया है।

कारपोरेट शासन-व्यवस्था *(Corporate Governance)*

क्या है?

कारपोरेट शासन-व्यवस्था बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश में उभरी, एक आधुनिक एवं बहुआयामी संकल्पना है जिसमें कंपनी की कार्य प्रणाली, निर्णय प्रक्रिया, संचालन व्यवस्था, लक्ष्य एवं उद्देश्यों को इस प्रकार निर्देशित एवं नियंत्रित करने की बात होती है ताकि कंपनी की संवृद्धि के साथ-साथ:-

1. पारदर्शिता, जबावदेहिता, निष्पक्षता (Fairness), सामाजिक हित एवं पर्यावरणीय मूल्यों का रक्षण एवं परिमार्जन हो।
2. शेयरधारकों एवं अन्य भागीदारों यथा उपभोक्ताओं, नागरिकों, कर्मचारियों आदि का भी हित सुरक्षित रहे तथा कंपनी के साथ-साथ उनकी भी दीर्घकालीन संवृद्धि हो।

संक्षेप में कारपोरेट शासन व्यापार में नैतिक आचरण है।

पृष्ठभूमि

1980 के बाद वैश्विक स्तर पर अनेक निजी कंपनियाँ यथा एनरॉन, वर्ल्ड कॉम आदि डूब गई। इन कंपनियों की दशा का विश्लेषण करने के बाद निम्नलिखित तथ्य उभरकर सामने आये-

1. निर्णय एवं कार्य प्रणाली में पारदर्शिता एवं सामूहिकता का अभाव।
2. निवेशकों का आकर्षित करने के लिए लाभ को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करना।
3. खातों से छेड़छाड़ करना, जैसे सत्यम् मामले में कंपनी के बैलेंस-शीट से छेड़छाड़ की गई।
4. अपनी देनदारियों को छिपाना आदि।
5. सामाजिक हित एवं पर्यावरणीय हितों की अनदेखी करना जैसे- यूनियन कार्बाइड।

ऐसी स्थिति में निजी क्षेत्र को अधिक उत्तरदायी, पारदर्शी एवं मूल्योन्मुखी बनाने के लिए कॉरपोरेट गवर्नेंस की अवधारणा उभरकर सामने आयी।

कॉरपोरेट गवर्नेंस की उपयोगिता

आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं में कारपोरेट जगत की भूमिका काफी व्यापक हो गयी है। कॉरपोरेट जगत की गतिविधियों आज कृषि, सेवा, बीमा आदि में हो गया है। इनकी व्यापक भूमिका को निम्न रूपों में देखा जा सकता है-

1. व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ाकर रोजगार सृजन करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।
2. कॉरपोरेट टैक्स के रूप में सरकार के राजस्व का एक **बड़ा भाग** इनसे आता है, जिससे सामाजिक कल्याण की योजनाओं के लिए अतिरिक्त संसाधन जुटाना आसान हो जाता है। देश के जीडीपी में इनका मुख्य योगदान है।
3. विदेशी निवेश को आकर्षित करने में इनकी भूमिका है।
4. कारपोरेट सैक्टर शेयर पर आधारित संगठन है। अवसर विशेष पर वे बड़ी मात्रा में शेयर जारी करती है। आज कई कंपनियों के शेयर की एक बड़ी संख्या जनता के पास है। सरकारी बीमा कंपनियाँ भी अप्रत्यक्ष तौर पर म्यूचुअल फंड, पेंशन फंड का पैसा पूंजी बाजार या कैपिटल सैक्टर में लगाती है। इस रूप में आम लोगों से कारपोरेट सैक्टर का भी संबंध है। इस रूप में कारपोरेट गवर्नेंस एक सामाजिक विषय बन जाता है।

इसलिए अब कॉरपोरेट गुड गवर्नेंस की भी संकल्पना आयी है ताकि देश और समाज के हितों की रक्षा हो। कंपनियों के संचालन महज शेयरधारक के हित के अनुकूल नहीं वरन् व्यापक सामाजिक संबंधों के हित से जुड़ता है। इसके लिए कानूनी व्यवस्था भी की जाती है। हर देश में ऐसी व्यवस्था की गयी है। भारत में इसका प्रमुख तरीका कंपनी अधिनियम जिसका नया संशोधित रूप अभी ससंद द्वारा पारित किया गया है क्योंकि कंपनियों का पंजीकरण, संचालन, कामकाज इसी एक्ट के अनुसार होना चाहिए। कंपनियों को सभी विनियमों का अनुपालन करना पड़ता है और उल्लंघन की स्थिति में दंडात्मक प्रावधान भी होते हैं।

कॉरपोरेट सैक्टर की समस्याएं एवं मसले

भारत में कई कंपनियों के मामले में नियमों के बावजूद (Insider Model) काम करता है अर्थात् कंपनी के (Promoters) (संस्थापक) वे शासन प्रणाली में पूर्णता छाए रहते हैं। इसके कारण शेयरधारिता व्यापक होने के बावजूद कंपनी के प्रबंधन एवं कामकाज पर नियंत्रण एक परिवार के सदस्यों द्वारा होता है और उन्हीं के हितों की प्रधानता दी जाती है।

निगमित प्रशासन के सिद्धांत (Principles of Corporate Governance)

एक कंपनी को-

1. बोर्ड एवं प्रबंधन की भूमिका एवं जिम्मेदारियों को मान्यता देनी चाहिए और उनका प्रकाशन करना चाहिए।
2. अपनी जिम्मेदारियों एवं कर्तव्यों को समुचित ढंग से निभाने के लिए एक प्रभावी संरचना, आकार एवं प्रतिबद्धताओं वाला बोर्ड

रखना चाहिए।

3. नैतिक एवं उत्तरदायित्वपूर्ण निर्णय निर्माण को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करना चाहिए।
4. एक ऐसी स्वतंत्र संरचना का विकास करना चाहिए जो कंपनी के वित्तीय विवरण की ईमानदारी को सत्यापित कर सके और उसकी रक्षा कर सके।
5. कंपनी को कंपनी से जुड़े सभी मामलों को समयबद्ध एवं संतुलित तरीके से निपटाना चाहिए।
6. शेयरधारकों के अधिकारों का सम्मान करना चाहिए और उन अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन को प्रोत्साहित करना चाहिए।
7. जोखिम अधिवीक्षण व प्रबंधन तथा आंतरिक नियंत्रण की एक मजबूत प्रणाली स्थापित करनी चाहिए।
8. निष्पक्ष समीक्षा करनी चाहिए तथा बोर्ड एवं प्रबंधन की प्रभाविता बढ़ाने के लिए सक्रिय प्रोत्साहन देना चाहिए।
9. यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पारिश्रमिक का स्तर एवं संरचना पर्याप्त और औचित्यपूर्ण हो तथा निगमित एवं व्यक्तिगत कार्य निष्पादन के साथ इनका संबंध सुपरिभाषित हो।
10. सभी वैधानिक साझीदारों के प्रति कानूनी एवं अन्य अनुबद्धताओं को मान्यता देनी चाहिए।

सरकारी प्रशासन में कॉरपोरेट गवर्नेंस की उपयोगिता

यद्यपि कॉरपोरेट गवर्नेंस का मूल विचार निजी क्षेत्र के लिए अस्तित्व में आया है परंतु इसकी मूल संकल्पना का लोक प्रशासन के लिए भी महत्व है।

उल्लेखनीय है कि लोक प्रशासन में सबसे बड़ी कमी पारदर्शिता, सहभागिता एवं उत्तरदायित्व का अभाव रहा है जिसके कारण वांछित सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है। उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता के पश्चात् कल्याणकारी राज्य के रूप में विकसित करने के क्रम में अनेक लोक उपक्रमों की स्थापना की गई। लेकिन पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व के अभाव तथा कुप्रबंधन के कारण न केवल भारी वित्तीय घाटों को झेलना पड़ा बल्कि सामाजिक-आर्थिक विकास की गति भी बाधित हुई।

समस्या है कि-

1. सरकारी कंपनी के निदेशक सरकार द्वारा नियुक्त होते हैं जो कि सरकार के हितों और निर्देशों को प्राथमिकता देते हैं न कि कंपनी के हितों को। Conflict होता है सरकारी निर्देश और Ethical Dilemma के बीच।
2. पब्लिक सेक्टर में कंपनी को अक्सर प्रत्यक्ष राजनीतिक आधार पर काम करने को कहा जाता है जैसे- किसी बड़े नेता के क्षेत्र में कंपनी की इकाई खोलना।

इसीलिए वर्तमान समय में सरकारी प्रशासन में भी इस अवधारणा की बात हो रही है। सरकारी तंत्र में कॉरपोरेट गवर्नेंस को सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखि तत्वों पर बल दिया जाना चाहिए।

1. सभी लोक उपक्रमों को तिमाही आधार पर अपने परिणामों को घोषित करना चाहिए।
2. सभी निर्णयों व निर्णय के कारणों को प्रकाशित किया जाना चाहिए।
3. निर्णय में विलम्ब के लिए अधिकारियों को दंडित किया जाना चाहिए।
4. आउटकम बजट को पूरे राष्ट्र में लागू किया जाना चाहिए और विकास कार्यक्रमों की तिमाही आधार पर समीक्षा की जानी चाहिए।
5. सूचना के अधिकार के अंतर्गत सभी सरकारी विभागों को लाया जाना चाहिए और सरकारी विभागों को स्वमेय सभी आवश्यक सूचनाएं व निर्णय ऑनलाइन प्रकाशित कर देने चाहिए।

इस प्रकार से निगमित अभिशासन की आचार संहिता को लोक प्रशासन के महत्व दिया जाना चाहिए ताकि करदाताओं के धन का सही उपयोग हो सके।

कारपोरेट सैक्टर क्या है?: किसी राष्ट्र के औद्योगिक, व्यापारिक, वित्तीय, कृषि तथा वाणिज्यिक विकास में लगी कंपनियों, उद्योगों तथा व्यावसायिक घरानों को कारपोरेट सैक्टर कहा जाता है। सामान्यत: कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कपंनियाँ,

'कारपोरेट सैक्टर' की परिचाय है।

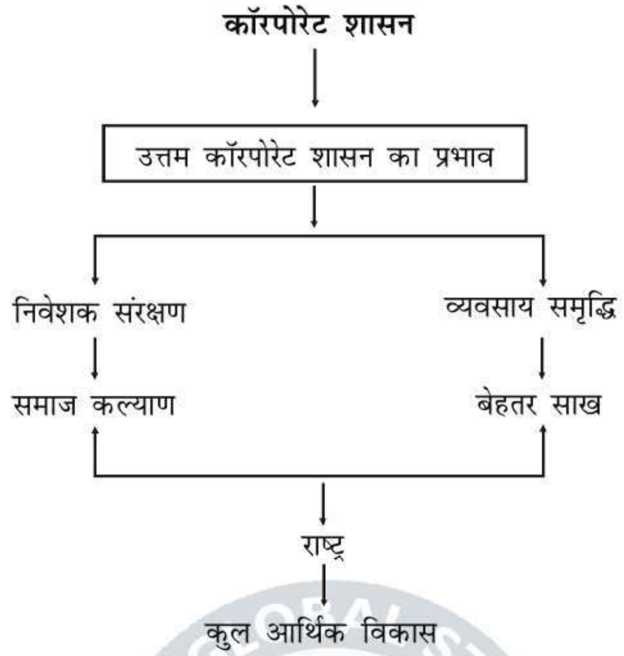

Corporate Social Responsibities (कॉरपोरेट (निगमित) सामाजिक उत्तरदायित्व)

इसका आशय है निजी क्षेत्र में लाभ का एक अंश सामाजिक विकास में खर्च करें।

आधारः कंपनी जो लाभ कमाती है वह केवल उसकी कुशलता एवं कार्य प्रणाली पर निर्भर नहीं है। बल्कि इसमें सरकार द्वारा विकसित की गई आधारभूत संरचना, मानव संसाधन के विकास के प्रयास, समाज और सरकार के सहयोग की भी भूमिका होती है। ऐसी स्थिति में कंपनियों का दायित्व है कि वे सामाजिक जिम्मेदारियां भी निभाये यथा पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार रक्षा, उपभोक्ता हित आदि।

निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की केवल मानव कल्याण के लिए एक पहल नहीं माना जा सकता बल्कि यह एक सुदृढ़ औद्योगिक प्रबंधन का भी आधार माना जा रहा है। सभी निजी कंपनियों से CSR के तहत यह अपेक्षा की जाती है कि निजी कंपनियों मानवीय व पर्यावरणीय हितों को औद्योगिक प्रबंधन में केन्द्रीय मुद्दा बनाएं।

केस स्टडी- भोपाल गैस त्रासदी: 2 दिसंबर 1984

भारत में **भोपाल गैस त्रासदी** एक मानवीय त्रासदी थी। जिसमें 15 हजार से अधिक लोग मारे गये। यह न केवल औद्योगिक कुप्रबंधन को दर्शाती है वरन् कहीं न कहीं निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी को भी अभिव्यक्ति करती है क्योंकि **यूनियन कार्बाइड कंपनी** द्वारा कंपनी के अंदर **गैस रिसाव** (मिथाईल आइसो साइनाइड) की स्थिति में आपात सुरक्षा के लिए किसी भी प्रकार कोई भी प्रबंधन नहीं किया गया था। औद्योगिक सुरक्षा उपायों की अवहेलना, औद्योगिक कुप्रबंधन को दर्शाता है। **भोपाल गैस त्रासदी का मामला, औद्योगिक कुप्रबंधन का भी उदाहरण है।** आज भी यह जन स्वास्थ्य के लिए एक भारी चुनौती बना हुआ है।

कारण:

1. उद्योगों के स्थान निर्धारण में लापरवाही।
2. औद्योगिक कुप्रबंधन।
3. आपदा नियंत्रण की कोई व्यवस्था नहीं।
4. न इंसाफ, न पर्याप्त मुआवजा, न उनके स्वास्थ्य सुधार हेतु प्रयास।

घटना के चार दिन बाद गिरफ्तार, कंपनी के अध्यक्ष एवं सीईओ वारेन एंडरसन, 6 घंटे के बाद कुछ मुआवजा देकर छूटे। विशेष

सरकारी विमान से दिल्ली आये और दिल्ली से अमेरिका चले गये।

सबकः

1. हानिकारक रसायनों के उत्पादन के संदर्भ न्यूनतम सुरक्षा मानक सुनिश्चित किये जाने चाहिए।
2. ऐसे संदर्भों में विशेष कानून बनाये जाने चाहिए ताकि अप्रिय घटना होने पर जबावदेहिता तय की जा सके।
3. विनियामक प्राधिकरण को अधिक सक्रियता से ऐसे उद्योगों पर ध्यान रखना चाहिए।

नवीन संदर्भ

सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद खतरनाक केमिकल कचरे को हटाने और उसे नष्ट करने का काम शुरू हो गया है। इस कचरे को नष्ट करने की जिम्मेदारी केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय को दी गई।

सत्यम् कम्प्यूटर घोटालाः प्राइस वॉटर हाऊस कूपर्स लिमिटेड द्वारा गलत बैलेंस शीट प्रस्तुत किया गया। लोगों से धोखाधड़ी की गई।

कॉरपोरेट शासन के संदर्भ में वैधानिक ढांचा

SEBI (Securites and Exchange Board of India) स्थापना 1988: सेबी ने कॉरपोरेट जगत के लिए 'कोड ऑफ कॉरपोरेट गवर्नेंस' को प्रस्तुत किया है। इसके मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं-

1. कंपनी के बोर्ड का स्वतंत्र रूप से गठन होना चाहिए जिसमें कम से कम 50% स्वतंत्र डायरेक्टरर्स रहने चाहिए।
2. बोर्ड विभिन्न महत्वपूर्ण कमेटियों का गठन करेगा जिसमें एक स्वतंत्र एवं प्रभावी ऑडिट कमेटी भी रहेगी।

उद्योगों एवं व्यवसायों में नैतिकता को बढ़ावा देने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें स्वैच्छिक बनाया जाए और कानूनी रूप से बाध्य भी बनाया जाये।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनियम बोर्ड अधिनियम 1992: इस अधिनियम ने एक स्वतंत्र पूंजी बाजार नियामक प्राधिकरण (सेबी) का गठन किया जिसका उद्देश्य प्रतिभूतियों में निवेश करने वाले निवेशकों के हितों की सुरक्षा करना तथा प्रतिभूति बाजार को संवर्द्धित एवं विनियमित करना था।

नये कंपनी अधिनियम में कॉरपोरेट शासन और Corporate Social Responsibities को सुनिश्चित करने हेतु बढ़ावा देने के लिए निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं।

अगस्त 2013 में **नया कंपनी कानून** पास हुआ। यह पहले की अपेक्षा अधिक सरल और आधुनिक है। इससे अब कारपोरेट सेक्टर को काम करना अधिक आसान होगा।

फायदा

9 अगस्त, 2013 का पेपर देखें-

1. कंपनियों के कामकाज में जवाबदेहिता एवं पारदर्शिता सुनिश्चित की जा सकेगी।
2. नये कानून से भारतीय कारपोरेट जगत को अधिक उत्तरदायी बनाया जा सकेगा।
3. भारत में बेहतर औद्योगिक माहौल बनाने में सहायता।

प्रमुख प्रावधान

1. नए कानून में पंजीकृत कंपनियों के बोर्ड में कम से कम एक-तिहाई स्वतंत्र निदेशक रखे जायेंगे। (इससे बोर्ड में छोटे निवेशकों का प्रतिनिधित्व बढ़ेगा)
2. कुछ वर्गों में आने वाली कंपनियों में कम से कम एक महिला निदेशक रखना होगा।
3. कंपनियों की एकाउंटिंग एव ऑडिट की निगरानी के लिए प्राधिकरण का गठन होगा।
4. छोटे शेयरधाकरों या उनके प्रतिनिधियों को किसी कंपनी पर कानूनी दावा ठोकने का अधिकार होगा।

5. **कंपनियों लिए सामाजिक जिम्मेदारी (कारपोरेट सोशल रेसपांसिबिलीटी, सीएसआर) के तहत अपने विशुद्ध मुनाफे का 2 फीसदी हिस्सा सामाजिक कार्यों पर अनिवार्य रूप से खर्च करना होगा।**

   यहाँ बड़ी कंपनियाँ उन्हें कहा गया है जिनका नेट वर्थ 500 करोड़ है या शुद्ध मुनाफा 5 करोड़ है।

6. इस राशि का प्रयोग अत्यधिक गरीबी भूखमरी से निपटने या मानव संसाधन विकास जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, MMR, IMR को कम करने या लैंगिक समानता या महिलाओं के सशक्तीकरण या देश के गंभीर बिमारियों से निपटने (एड्स, टीबी) या रोजगार प्रशिक्षण आदि में होगा अन्यथा सरकार द्वारा विकास के लिए कोषों में (Prime Minister Fund) भी कर सकती है।

समस्या:

1. सीएसआर पर खर्च न करने वाली कंपनियों को दंडित करने का प्रावधान नये कानून में नहीं है। यहां सिर्फ यह कहा गया है कि ऐसा न करने पर कंपनियों को उसका कारण बताना होगा।
2. कानून में सामाजिक कार्यों को स्पष्ट नहीं किया गया है ऐसी स्थिति में कंपनी यह पैसा यदि धार्मिक स्थल आदि के भी विकास में भी खर्च करे तो भी उसे सीएसआर में लिया जा सकेगा।

चुनौती:

1. कंपनियों की निगरानी के लिए जिन संस्थाओं की व्यवस्था नये कानून में की गई हैं वे अपनी स्थापना के बाद कारगर ढंग से काम करेंगे।
2. सीएसआर पर खर्च होने वाले धन का लाभ गरीब तबकों तक पहुंचने की गारंटी सुनिश्चित करना।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC-II)
(Second Administration Reforms Commission, 2005-2009 [30 March 2009])

प्रशासन में व्यापक सुधार हेतु सुझाव देने, उसे कुशल, प्रभावी एवं जबावदेह प्रशासनिक व्यवस्था बनाने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा 31 अगस्त, 2005 में कर्नाटक के पूर्व मुख्यमंत्री वीरप्पा मोइली के अध्यक्षता में 'द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग' का गठन किया गया था। प्रशासनिक विकास या सुधार के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं-

1. प्रशासन की क्षमताओं में वृद्धि करना।
2. प्रशासन में संरचनात्मक, प्रक्रियात्मक एवं व्यवहारात्मक सुधार करना।
3. प्रशासन को आधुनिक तकनीकों एवं विकास से दुरुस्त करना।
4. प्रशासन के कौशल में वृद्धि करना।

12वाँ प्रतिवेदन: कुल 15 प्रतिवेदन दिये गये हैं।

1. प्रथम प्रतिवेदन के सूचना के अधिकार से संबंधित है।
2. चौथा प्रतिवेदन शासन में नैतिकता से संबंधित है।
3. **12वाँ नागरिक-केन्द्रित प्रशासन से संबंधित है।**

नागरिक-केन्द्रित प्रशासन: अधिशासन का हृदय (Citizen Centric Administration: The Heart of Governance)

इस प्रतिवेदन में आयोग ने प्रशासन में जन सहभागिता, विकेन्द्रीकरण, प्रत्यायोजन, जन शिकायत निवारण तंत्र, उपभोकता संरक्षण आदि से संबंधित सुझाव दिये हैं-

जन सहभागिता

इस रिपोर्ट के अनुसार प्रशासन को जनकेन्द्रित और जनोन्मुखी होना चाहिए। यही लोकतंत्र का मूल है और ऐसा होने पर ही सुशासन की प्राप्ति संभव है।

1. सरकारी कार्यक्रमों की योजना बनाने, क्रियान्वित करने तथा उनकी मॉनिटरिंग करने की प्रक्रिया में नागरिकों की सहभागिता

सुनिश्चित की जाए।

2. सरकारी तंत्र की प्रक्रिया में नागरिकों की सहभागिता सुनिश्चित की जाए। इस संदर्भ में महिलाओं एवं शारीरिक रूप से नि:शक्तजनों की सहभागिता को प्रत्येक लोक नीति कार्यक्रम एवं योजना में स्थान दिया जाए।
3. सरकारी विभागों को नियामकीय कार्य करते समय कुछ मूलभूत सिद्धांतों का ध्यान रखना चाहिए जिसमें नियामकीय कार्य की अनिवार्यता, प्रभावशीलता, स्व-नियंत्रण, सरलता, पारदर्शी तथा नागरिकों से मित्रवत् तथा नागरिक समूहों की भागीदारी सम्मिलित हो।
4. प्रत्येक सरकारी संगठन में नागरिकों के सुझावों की प्राप्ति को अनिवार्य कर देना चाहिए।
5. नागरिकों से सरकारी सेवाओं के संदर्भ में नियमित रूप से फीडबैक एवं सर्वेक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।
6. सभी कार्यक्रमों में अनिवार्य रूप से 'सामाजिक अंकेक्षण' को लागू किया जाए।
7. शारीरिक रूप से नि:शक्त व्यक्तियों की पहचान हेतु सरकार को अधिक सक्रियता से प्रयास करने चाहिए। इस हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर शिविर लगाए जाने चाहिए। ऐसे व्यक्तियों का जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर डाटा-बेस तैयार होना चाहिए।

सात चरणीय मॉडल (Seven Step Model)

जनता से सीधे जुड़े सरकारी विभागों में नागरिक केन्द्रित सात चरणीय प्रतिमान (Seven Step Model) को लागू किया जाए जो इस प्रकार हैं-

1. अपनी सेवाओं तथा ग्राहकों को परिभाषित करें।
2. प्रत्येक सेवा के मानक तथा आदर्शों को निर्धारित करें।
3. निर्धारित मानकों की प्राप्ति हेतु क्षमता विकसित करें।
4. मानकों की प्राप्ति हेतु निष्पादन करें।
5. निर्धारित किए गए मानकों तथा निष्पादन की मॉनिटरिंग करें।
6. एक स्वतंत्र तंत्र के द्वारा उत्पन्न प्रभाव का मूल्यांकन करें।
7. मॉनिटरिंग तथा मूल्यांकन परिणामों के आधार पर निरंतर सुझाव करें।

एकल खिड़की प्रणाली

सरकारी कार्यों में देरी में कमी लाने एवं नागरिकों की सुविधा बढ़ाने हेतु नियामकीय एवं विकासपरक अभिकरणों में एकल खिड़की अवधारणा को लागू किया जाना चाहिए।

जन शिकायत निवारण तंत्र

1. प्रत्येक संगठन में एक प्रभावी जनपरिवेदना निवारण तंत्र होना चाहिए। सूचना का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत बनाए गए लोक सूचना अधिकारियों की भांति लोक परिवेदन अधिकारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
2. प्रत्येक सरकारी संगठन शिकायतों के पंजीकरण की त्रुटिरहित व्यवस्था, उनके निस्तारण की निर्धारित समयावधि तथा तत्संबंधी मॉनिटरिंग एवं मूल्यांकन को सुनिश्चित करे।
3. सभी परिवेदनाओं का निस्तारण 30 दिनों में होना चाहिए। यदि कोई अधिकारी इस नियम का पालन नहीं करता है तो उसे वित्तीय दंड देना चाहिए।
4. जनपरिवेदना संभाव्य क्षेत्रों की पहचान एवं विश्लेषण करना चाहिए।
5. उपभोक्ता विवादों में निस्तारण हेतु लोक अदालतों का सहारा लिया जाए।
6. प्रत्येक विभाग में लाइसेंस/अनुमति/पंजीकरण इत्यादि करने की अधिकतम समय सीमा निर्धारित कर देनी चाहिए। इस संदर्भ में FIFO (First in First Out) पद्धति को अपनाया जाए।

7. लाइसेंस प्रदान करने वाली सभी संस्थाओं द्वारा नागरिक शिकायतों की रसीद प्रदान करनी चाहिए।
8. एक स्वतंत्र अभिकरण से लाइसेंन्सिंग तथा निरीक्षण प्रणाली का वार्षिक अंकेक्षण करवाया जाना चाहिए।
9. विभिन्न सांविधानिक आयोगों में शिकायत करने का सामान्य प्रारूप निर्धारित कर देना चाहिए।
10. निरीक्षण अधिकारियों द्वारा आकस्मिक निरीक्षण किया जाना चाहिए तथा सभी निरीक्षणों की रिपोर्ट जनता के सामने लाई जानी चाहिए।